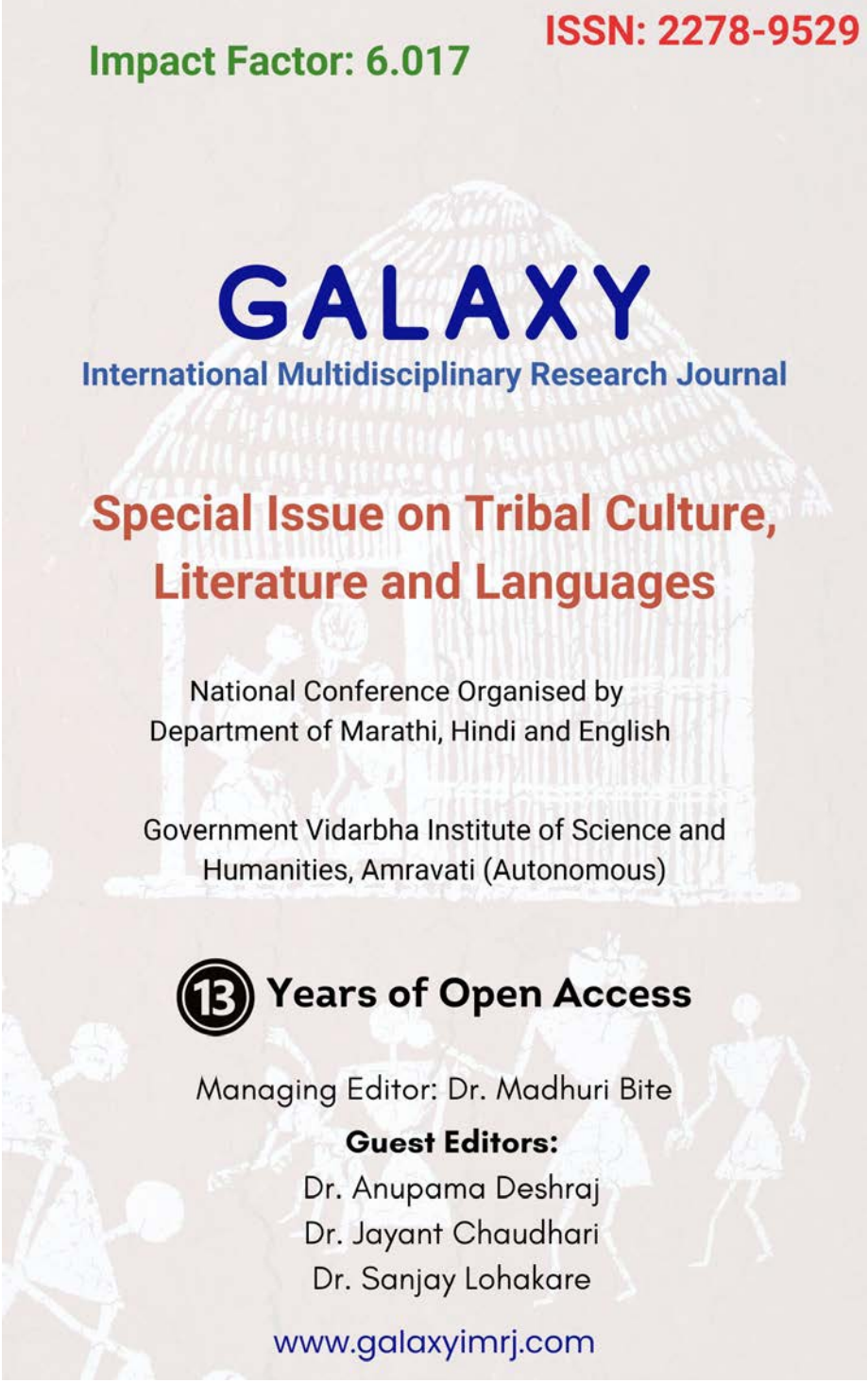

About Us: http://www.galaxyimrj.com/about-us/
Archive: http://www.galaxyimrj.com/archive/
Contact Us: http://www.galaxyimrj.com/contact-us/
Editorial Board: http://www.galaxyimrj.com/editorial-board/
Submission: http://www.galaxyimrj.com/submission/
FAQ: http://www.galaxyimrj.com/faq/

आदिवासी कला (चित्रकला के विशेष संदर्भ में)

डॉ ममता मेहता
अमरावती.

भारत के आदिवासियों का इतिहास आर्यों के आगमन से भी पूर्व का है।कई युगों तक इस उपमहाद्वीप के पहाड़ी भागों में ये अधिकार पूर्वक जीवन निर्वाह कर रहे थे। सभ्यता के विस्तार के साथ इन क्षेत्रों पर उनका अधिकार शनः शनः समाप्त होता गया।अब यह आदिवासी अपने ही क्षेत्र से विकास के नाम पर बेदखल किया जा रहे हैं ।जंगल वासी अब न प्राकृतिक रूप से जीवन यापन कर सकते हैं ना जंगल की किसी वनस्पति का उपयोग कर सकते हैं ना शिकार कर सकते हैं। हजारों आदिवासी जीविका की तलाश में शहरों में आ गए हैं। कई अपनी परंपराओं संस्कृति व अपनी जड़ों से कट गए हैं। उनकी संताने तो अपनी समृद्ध विरासत से लगभग अनभिज्ञ ही है, फिर भी कुछ आदिवासी समुदाय अपनी नई पीढ़ी में अपनी कला संस्कृति व परंपराओं को बनाए रखने के प्रयास में है और कुछ हद तक सफल भी हुए हैं।अपने परंपरागत स्वरूप में आदिवासी कला, क्षेत्र विशेष के किसी आदिवासी समुदाय द्वारा किया गया कला कर्म है ।हम यहां कुछ आदिवासी जनजातियों की कला के बारे में जानेंगे---

गौंड कला ---- भारत के सबसे बड़े समुदाय गौंड आदिवासियों की उत्पत्ति द्रविडों से हुई मानी जाती है।गोंड शब्द वस्तुतः कौंड शब्द का अपभ्रंश है जिसका अर्थ द्रविड़ में हरे-भरे पहाड़ों से है यह समुदाय दक्षिण में गोदावरी नदी, घाटियों उत्तर में विंध्य पर्वतों तक एक विस्तृत क्षेत्र में फैला हुआ समूह है। मध्य प्रदेश में वह कई शताब्दियों तक अमरकंटक पर्वत श्रेणी के नर्मदा क्षेत्र में विंध्य सतपुड़ा तथा मंडला के घने जंगलों में निवास करते थे। मध्य प्रांत को गोंडवाना कहा जाता था क्योंकि वहां गोंड जाति का आधिपत्य था फिर जैसा कि हमने आरंभ में ही बताया है कि धीरे धीरे उन्हें अपने साम्राज्य तथा भू भागों से वंचित कर दिया गया और उनका जीवन खतरे में पड़ गया।जब जीवन ही खतरे में पड़ गया तो कलाएं कहां जीवित रहती उनका अस्तित्व भी खोने लगा। इस पीड़ा को भी उन्होंने गीत नृत्य एवं चित्रकला के माध्यम से व्यापक रूप में उजागर किया है।घर से बेघर होने पर काम की तलाश में गोंड आदिवासी

शहरों की तरफ निकलने लगे तो उनके सांस्कृतिक आधार भी विलुप्त होने लगे फिर भी कहीं-कहीं यह कला अभी भी जीवित है।

गौंड कला का परिचय ---- गोंड आदिवासी कला में लोक नृत्य लोक गीत और चित्रकला शामिल है। यह वास्तव में परधान गौंडों की चित्रकला है। परधान गोंड एक तार वाले वाद्य यंत्र जिससे कि वह अदृश्य शक्तियों के लिए गाकर प्रार्थना करते थे साथ ही युवा पीढ़ी को अपनी पौराणिक कथाओं और संस्कृति के बारे में जानकारी देते थे का उपयोग लोक गीत और लोक नृत्य के लिए करते थे।गोंड कला की उत्पत्ति दीवारों की सजावट से हुई जिसे वे अपने घर में बनाते थे इसे भित्ति चित्र भी कहा जाता है। यह घर की दीवारों पर चित्रित किए जाते हैं। इन चित्रों में पेड़ पौधों और जंगली जानवरों की आकृतियां विशेष रूप से होती हैं। यह कला लोक कथाओं से जुड़ी है। प्रकृति चित्रण इसकी विशेषता है। फूल,वृक्ष,लता, जीव जंतु से जुड़ी आकृतियां प्रतीकों द्वारा उनको भरना तथा प्रकृति की शक्ति को उकेरना उनके मुख्य भाव हैं। यह कला प्रकृति का महत्व , वृक्षों की उपयोगिता,जंगल की पूजा, वन्य जीव जंतुओं से पारस्परिक संबंध जैसे तथ्यों को उजागर करती है। पेंटिंग के लिए रंग भी प्राकृतिक ही होते हैं जो चारकोल, रंगीन मिट्टी, पौधों पत्तियां, गाय के गोबर इत्यादि से बनाए जाते हैं। पेंटिंग के लिए कागज या कैनवस भी हस्त निर्मित होता है।

गोंड चित्रकला में निम्न विषय मुख्य रूप से चित्रित किए जाते हैं----

वन्य प्राणी --* वन्य जीव जंतुओं में शेर बाघ हाथी हिरण सांप जंगली सूअर के साथ गाय,बंदर घोड़े मोर तथा जलचर में मछली केकड़े इत्यादि चित्रित किए जाते हैं।

महुआ का पेड़ ---*पेड़ पौधों के चित्रण में महुआ गोंड जनजाति के लिए विशेष महत्व रखता है। इसलिए अपनी कला में वे इसे विशेष रूप से चित्रित करते हैं। इसके बीज,फूल और पत्तियां कई तरह से उपयोग में लाई जाती है।

लोक कथाएं ---*अपने दैनिक जीवन के मिथक, किवदंतियां तथा पौराणिक कथाएं भी प्रमुख रूप से चित्रित किए जाते हैं।

आदिवासी देवी देवता ---- फुलवारी देवी,जल हारिन देवी,जल देवता,वन देवता इत्यादि।वर्तमान में भगवान शिव, कृष्ण, गणेश इत्यादि भी चित्रित किए जाने लगे हैं।

गोंड आदिवासी प्रकृति को विशेष रूप से चित्रित करते हैं। उनके अनुसार प्रकृति और मनुष्य एक दूसरे के पूरक हैं।बिना प्रकृति मनुष्य का जीवन संभव नहीं है। बिंदु लकीरें रेखाएं पानी की बूंदे बीज के आकार तथा ज्यामिति आकृतियां उनके विशेष पैटर्न हैं।

भील कला ---- भील भारत का दूसरा वृहत्तम जनजातीय समुदाय है। यह मुख्य रूप से मध्य प्रदेश,गुजरात,राजस्थान तथा महाराष्ट्र में निवास करता है।कुछ भील स्वयं को एकलव्य का वंशज बताते हैं । भील अपनी ज्वलंत और विस्तृत चित्रकला के लिए प्रसिद्ध हैं ।यह चित्र मिट्टी की दीवारों फर्श,कपड़ों पर उकेरे जाते हैं। इस कला का इतिहास हजारों साल पुराना है। भील कला के सबसे पुराने नमूने भारत के मध्य प्रदेश में गुफा की दीवारों पर पाए गए हैं। भील चित्रकला के विषय भी गोंड चित्रकला की तरह प्रकृति,जानवर तथा मानव आकृतियां है।इस चित्रकला के मूल में प्रकृति और रोजमर्रा की जिंदगी का चित्रण है जो प्रकृति और मनुष्य के पारस्परिक संबंध को दर्शाता है। भील कला एक सहज और मौलिक कला है जो प्रकृति के साथ विशेष संबंध बनाए हुए हैं। भील पेंटिंग में जानवरों जलचर देवताओं तथा त्योहारों के चित्रण के साथ मुख्य रूप से सूर्य और चांद बनाए जाते हैं। भील चित्रकला में मुख्य रूप से-- ----

प्रकृति चित्रण -- - पेड़ पौधे फूल पत्ते टहनियां इत्यादि चित्रित जाती है।

वन्य जीव--- गोंड जनजाति के समान ही शेर बाघ हाथी कीड़े मकोड़े हिरण के चित्र बनाए जाते हैं।

देवी देवता--- वन के देवता, जल के देवता के साथ भील जनजाति सूर्य और चंद्रमा को मुख्य देवताओं के रूप में मानकर चित्रित करती है।

जन्म मृत्यु --- जन्म और मृत्यु भी भील कला का प्रमुख क्षेत्र है। जन्म और मृत्यु दोनों ही यह जनजाति उत्सव के रूप में मानती है।

धार्मिक त्योहार --- त्योहार का चित्रण, विभिन्न अनुष्ठान तथा धार्मिक अवसर भी उनके मुख्य विषय हैं।

प्राकृतिक घटनाएं --- उनके चित्र बदलते मौसम तथा प्रकृति की घटनाओं जैसे बाढ़,दावानल, घने बादल, बिजली को चित्रित करते हैं और वे देवता जो इन प्राकृतिक आपदाओं से उनकी रक्षा करते हैं।

चित्र बनाने के लिए रंग भी प्राकृतिक ही होते हैं ।पेड़ के पत्ते,फूल,मिट्टी,हल्दी आटा तेल चुनाव चावल का पाउडर, जड़े पत्थर इत्यादि। इसके साथ ही यह ' डोर' नामक विशेष विधि का भी उपयोग करते हैं जिसमें धागे को पेट में डुबोकर पेंटिंग की रूपरेखा बनाई जाती है।बिंदु रेखाएं घुमावदार प्रतीक इत्यादि इस कला के पैटर्न है ।

पिथौरा चित्रकला -- - यह भील जनजाति की विशिष्ट चित्रकला है जो इनके सबसे बड़े त्यौहार पिथौरा पर घर की दीवारों पर बनाई जाती है।पहले यह चित्रकारी सिर्फ घर की दीवारों पर की जाती थी पर वर्तमान में यह कागज कैनवस तथा कपड़ों पर भी की जाने लगी है।पिथौरा चित्रकला उनके जीवन में काफी महत्व रखती है।उनका विश्वास है कि इस चित्रकला को घरों की दीवारों पर चित्रित करने से घर में शांति खुशहाली व समन्वय बना रहता है और विकसित होता है। पिथौरा चित्रकार को लखाड़ा कहा जाता है। पिथौरा चित्रकार सिर्फ पुरुषों का क्षेत्र है महिलाओं के लिए इसका चित्रण निषेध है।

मधुबनी कला ---- मधुबनी कला बिहार की प्रसिद्ध लोक कला है।यह मुख्य रूप से बिहार के मधुबनी जीतवारपुर रांटी तथा दरभंगा के कुछ क्षेत्रों में की जाती है।मधुबनी उसे क्षेत्र का नाम है जो कभी मिथिला के नाम से जाना जाता था इसलिए इसे मिथिला चित्रकला भी कहते हैं। जिले के कुछ हिस्सों

में सबसे शुरुआती आदिवासी के अवशेष मिलते हैं ।आर्यों से पहले इस क्षेत्र पर आदिवासियों का आधिपत्य था।

माना जाता है कि राम सीता के विवाह के अवसर पर राजा जनक ने दीवारों पर इस कला के चित्र बनवाए थे।असली रूप में यह पेंटिंग गांव की मिट्टी से लीपी गई झोपड़ियों की दीवारों में देखने को मिलती थी। इस पेंटिंग के दो प्रकार है भित्ति चित्र और अल्पना।

भील गौंड की तरह इसमें भी प्रकृति प्राकृतिक नजारे पेड़ पौधे फूल जानवर तथा सूर्य चंद्रमा उकेरे जाते हैं।

तुलसी विवाह तुलसी की पूजा के साथ विवाह के दृश्य भी इस चित्रकला में चित्रित किए जाते हैं।मधुबनी को घर की तीन खास जगह पर बनाने की परंपरा है पूजा घर,कोहबर और शादी या किसी खास उत्सव पर घर की बाहरी दीवारों पर। मधुबनी कला में निम्न विषय खास तौर पर लिए जाते हैं---

प्रकृति चित्रण --- प्रकृति के नजारे, पहाड़,झरने,उगता हुआ सूरज,कमल के फूल,बांस,पेड़ पौधे तुलसी का चौरा, नदिया,जंगल इत्यादि ।

वन्य जीव --- हिरण मोर तोता हाथी चिड़िया सांप आदि

देवी देवता--- दुर्गा,काली,राम सीता, राधा कृष्ण,शिव पार्वती,सूरज चांद इत्यादि।

पौराणिक कथाएं ---- विशेषत: रामायण महाभारत,पौराणिक कथाओं के साथ हिंदू उत्सव, 16 संस्कार और विवाह और आधारित चित्र ।

इन्हें बनाने के लिए भी घरेलू रंग ही इस्तेमाल किए जाते हैं जैसे हल्दी,केले के पत्ते,लाल पीपल की छाल,चावल का पाउडर,चंदन,पराग,वर्णक।रंग की पकड़ बनाने के लिए बबूल के वृक्ष की गोंद को मिलाया जाता है।अल्पना या अरिपन आंगन या फर्श पर लाइन खींच कर रंगोली जैसी बनाई जाती है। चित्रों में उकेरे गए प्राकृतिक चित्रण या जानवर किसी न किसी प्रतीक को लिए होते हैं जैसे----

कमल का फूल ---- सौभाग्य का प्रतीक कमल देवताओं से जुड़ा हुआ है ब्रह्मा विष्णु महेश लक्ष्मी कमल पर आसीन हैं। इसे धार्मिक अनुष्ठानों में भी मुख्य रूप से लिया जाता है इसलिए कमल मधुबनी चित्रकला में पवित्रता,ज्ञान और दिव्यता का प्रतीक है।

हिरण का जोड़ा -- - हिरण भगवान कृष्ण से संबंधित है।बांसुरी बजाते समय उनके चारों ओर गाएं या हिरण भी दिखाई देते हैं।इस चित्रकला में हिरण सुंदरता कलात्मक और दयालुता का प्रतीक है साथ ही प्रकृति और पर्यावरण का भी।

मोर चित्र--- मोर देवी सरस्वती के साथ जुड़ा है।भगवान कार्तिकेय का वाहन भी मोर है इसलिए इस चित्रकला में मोड़ को सुंदरता,प्रेम,ज्ञान, रोमांस और कला के साथ धन और सौभाग्य के प्रतीक के रूप में चित्रित किया जाता है।

सूर्य--- सूर्य शक्ति ऊर्जा जीवंतता और उजाले का प्रतीक है।इसे समृद्धि विकास और सकारात्मक से जोड़ा जाता है।

हाथी--- शक्ति,ज्ञान और धन का प्रतीक है। भगवान गणेश का स्वरूप हाथी का है। देवी लक्ष्मी हाथी के साथ दिखाई देती हैं ।इस मधुबनी चित्रकला में हाथी शक्ति बुद्धि और सौभाग्य के प्रतीक के रूप में उकेरा गया है।

मधुबनी पेंटिंग एक उत्तम और जटिल कला है। सांस्कृतिक कलात्मक आधार लिए यह चित्रकला गहराई और जटिलता का मिश्रण है।

वारली कला --- वारली जनजाति महाराष्ट्र के ठाणे जिले के धानू,तलासरी एवं जवाहर तालुका में निवास करती है। वारली शब्द वार्ला से निकला है जिसका शाब्दिक अर्थ जोती गई भूमि का छोटा टुकड़ा है। वारली जनजाति कृषि प्रधान है। वारली चित्रकला इसी जनजाति की धरोहर है।यह कला जीवन के मूल सिद्धांतों को प्रस्तुत करती है।उनके चित्र देखकर समझ जा सकता है कि यह जनजाति समय चक्र में विश्वास करती है। वारली लोग प्रकृति को मां समझते हैं। यह उनके सभी रीति रिवाज और परंपराओं की धूरी है।

वारली चित्रकला के विषय ----

फसलें ---- कृषि प्रधान जनजाति की इस कला का मुख्य विषय तैयार फसलों को चित्रित करना है।

ऋतु ---- यह जनजाति प्रकृति के अत्यंत नजदीक इसलिए विभिन्न ऋतुओं को अपने चित्रों में चित्रित करती है ।

जन्म से मृत्यु तक के संस्कार --- बच्चे का जन्म, पालना शादी,उत्सव तथा अन्य कई धार्मिक अनुष्ठान इस वारली चित्रकला में उकेरे जाते हैं ।

इसके अलावा पालाघाट देव,पक्षी पेड़ और वृक्ष पत्ते पुरुष और महिलाएं भी चित्रित किए जाते हैं जो सर्पिले और खुले घेरे में नृत्य करते हैं।

यह पेंटिंग प्राथमिक आकृतियों पर आधारित है त्रिभुज चतुर्भुज और वृत्त। बिंदु डेश और सिंगल लाइन इसके मुख्य आधार हैं।

रंग इनके भी प्रकृतिक ही होते हैं जिनमें चावल का आटा,कोयला,गाय का गोबर, नील,और फूल पत्ते शामिल हैं।

तंजावुर कला ----तंजावुर चित्रकला की उत्पत्ति तमिलनाडु के तंजौर शहर से हुई है यह चित्रकला सोने, कांच मोती और अन्य कीमती पत्थरों से अलंकृत की जाती है। इस पेंटिंग में मुख्य रूप से हिंदू देवता संत और पौराणिक कथाएं चित्रित की जाती है।पहले यह पेंटिंग घरों महलों मंदिर के दरवाजों और दीवारों को सजाने के लिए की जाती थी। महल की दीवारों पर राज्याभिषेक,युद्ध में जीत तथा राज दरबार के चित्र बनाए जाते थे।

कावड़ चित्रकला ----राजस्थान के भीलवाड़ा जिले में स्थित बस्सी नामक गांव में कुमावत कारीगर जाति ने कावड़ कला की परंपरा शुरू की थी।कावड़िया अपने वंश का संबंध पौराणिक पात्र श्रवण से जोड़ते हैं जो अपने अंधे माता-पिता को कावड़ी में बिठाकर तीर्थ यात्रा पर ले जा रहा था। क्योंकि वह

मंदिर तक नहीं पहुंच सके इसलिए उसने राजा दशरथ से मंदिर को अपने माता-पिता के पास ले जाने की इच्छा जाहिर की और यही से कावड़ कहानी की शुरुआत हुई।

यह कला लोक कथा के देवता पाबूजी को समर्पित है जिसे "पाबूजी की फड़"या "कावड़ कला" कहा जाता है। सुतार समुदाय द्वारा यह कावड़ बनाए जाते हैं जो किवाड़ यानी दरवाजे का अपभ्रंश है यह सुतार बढ़ई और चित्रकार दोनों ही होते हैं।यह काठ के सुंदर मंदिर बनाते हैं। कावड़ लकड़ी की एक छोटी सी अलमारी की तरह होती है जिसमें 15 - 20 पट होते हैं जिन पर चित्रकारी के माध्यम से कोई कहानी होती है। कथा वाचक अथवा पुजारी ही ये कावड़ियां भाट हैं जो घूम घूम कर कहानी सुना कर अपनी कावड़ कला का वर्णन करता है। इस कावड़ के साथ वह श्रोताओं के बीच घूमता है और कहानी सुनाने के लिए कावड़ के पट खोलता जाता है जैसे-जैसे पट खुलता है श्रोताओं की उत्सुकता बढ़ती जाती है। पहले यह चित्रकारी कपड़ों पर की जाती थी पर समय के साथ कपड़े खराब हो जाते थे तो इन कलाकारों ने काठ के मंदिर,कावड़ बनाने आरंभ किए।

मुख्यतः भाट जाति के लोग माथे पर कावड़ लेकर गांव गांव पहुंचते और शाम को सार्वजनिक स्थान पर कावड़ कहानी का वाचन और प्रदर्शन करते थे।

कह सकते हैं कि यह आदिवासी कलाएं उत्कृष्ट प्रतिभा के साथ अपनी पारंपरिक विरासत लोक संस्कृति लोक मान्यताओं को सुदृढ़ करने के साथ प्रकृति और पर्यावरण के महत्व और संरक्षण पर भी जोर देता है। यह कला संवेदनशीलता से परिपूर्ण है,जीवन की अभिव्यक्ति है और प्रकृति के नजदीक रहने वाली इन जातियों के जोश और रहस्य को समेटे हुए हैं।यह कला वर्तमान में भी अपने जीवन के रूप में देश की सांस्कृतिक पहचान का अभिन्न अंग है।

संदर्भ:

1)जनजाति कला और संस्कृति

2)बस्तर की आदिवासी एवम लोक चित्र कला -- आलेख मुश्ताक खान

3) माईथोस एंड लोगोस ऑफ द वार्लिस ए ट्राइबल वर्ल्डव्यू --- संपादक अजय दांडेकर

4,) भारतीय चित्र कला का इतिहास आधुनिक काल --- कृष्ण चैतन्य

5) तंजावुर एक सांस्कृतिक इतिहास ----

प्रदीप चक्रवती